अध्याय–3

भारत में संवैधानिक विकास की प्रक्रिया

भारत में आजादी के पश्चात संवैधानिक लोकतंत्र की स्थापना हुई। मध्यकालीन राजतंत्रीय व्यवस्था से संवैधानिक लोकतंत्र के विकास की यात्रा विभिन्न चरणों में सम्पन्न हुई। इन चरणों में महत्त्वपूर्ण घटक ईस्ट इण्डिया कम्पनी का भारत आगमन था। ब्रिटिश क्राउन ने सन 1600 ई. में एक चार्टर (राजपत्र) जारी कर ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना की। इस कम्पनी का नाम ''द गवर्नर एण्ड़ कम्पनी ऑफ मर्चेण्टस ऑफ लंदन ट्रेडिंग इनटू ईस्ट इण्ड़ीज'' रखा गया। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने भारत में सर्वप्रथम सन 1612 ई. में सूरत में अपना कार्यालय स्थापित किया। शुरुआत में यह कम्पनी एक व्यापारिक संस्था ही थी। प्रारम्भ में चार्टर (राजपत्र) के अनुसार कम्पनी को कुछ सीमित विधायी एवं न्यायिक अधिकार ही प्राप्त थे। परन्तु धीरे–धीरे इसने अपनी कार्यशैली बदल ली और सन 1765 के आते–आते यह एक ऐसी क्षेत्रीय शक्ति के रूप में उभरी जो भारत में अंग्रेजी साम्राज्य के विस्तार का साधन बन गयी। ब्रिटिश शासन काल को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है (1) सन 1857 ई. तक का कम्पनी का शासन और (2) सन 1858 से 1947 ई. तक ब्रिटिश ताज का प्रत्यक्ष शासन।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने सन 1757 ई. की प्लासी की लड़ाई, सन 1764 ई. का बक्सर का युद्व तथा सन 1765 ई. में इलाहाबाद की संधि से अपने प्रभाव में वृद्धि कर ली। इलाहाबाद की संधि से बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा की दीवानी प्राप्त करने के पश्चात लार्ड क्लाइव के द्वैध प्रशासन ने बंगाल में अराजकता की स्थिति पैदा कर दी। कम्पनी का संचालन कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स किया करते थे जो कोर्ट ऑफ प्रोपराइटर्स द्वारा चुने जाते थे। ये प्रोपराइटर्स कम्पनी के हिस्सेदार थे। भारत में कम्पनी के प्रभाव में वृद्धि के फलस्वरूप कम्पनी के कर्मचारियों द्वारा अत्यधिक मुनाफा कमाने व कम्पनी के आर्थिक संकट में उलझने के कारण इस पर ब्रिटिश संसद व सरकार के अधिक प्रभावी नियंत्रण की माँग उठने लगी। इस हेतु ब्रिटिश संसद द्वारा सन 1773 में रेग्यूलेटिंग एक्ट पारित किया गया। ब्रिटिश संसद के इस संवैधानिक दखल ने भारत में संवैधानिक इतिहास की एक लम्बी प्रकिया प्रारम्भ कर दी जिसको निम्नलिखित शीर्षकों के अर्न्तगत वर्णित किया जा सकता है–

सन 1773 ई. का रेग्यूलेटिंग एक्ट–

भारत में संवैधानिक विकास का यह अधिनियम एक महत्त्वपूर्ण कदम था क्योंकि ब्रिटिश सरकार द्वारा ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कार्यों को नियंत्रित और विनियमित करने का यह पहला प्रयास था। इस एक्ट से कम्पनी के कार्यों व अधिकारों में निम्नलिखित मुख्य परिवर्तन हुए–

(i) इस एक्ट के तहत बंगाल का गवर्नर, गवर्नर जनरल बनाया गया और इस प्रकार बंगाल के तत्कालीन गवर्नर वॉरेन हेस्टिंग्स बंगाल के प्रथम गवर्नर जनरल बने।

(ii) गवर्नर जनरल की परिषद में चार सदस्यों का प्रावधान रखा गया।

(iii) इस एक्ट ने "ब्रिटिश भारत में केन्द्रीय सरकार की नींव रखी। कलकत्ता प्रेसीडेन्सी को पदोन्नत किया गया और उसे अधीनस्थ प्रेसीडेन्सियों की विदेश नीति, युद्ध एवं शान्ति के मामलों पर नियंत्रण प्रदान किया गया।

(iv) ईस्ट इंडिया कम्पनी के भारतीय प्रशासन पर संसदीय नियंत्रण की शुरूआत हुई।

(v) भारत में सर्वप्रथम कम्पनी के प्रशासन एवं कर्मचारियों पर न्यायिक नियंत्रण हेतु सुप्रीम कोर्ट की स्थापना की गई।

अतः स्पष्ट है कि रेग्यूलेटिंग एक्ट से ब्रिटिश संसद व सरकार का ईस्ट इण्डिया कम्पनी पर नियंत्रण बढ़ गया। यह एक्ट गुरूमुख निहाल सिंह (लैण्डमार्क्स इन इण्डियन कॉन्स्टीटयूशन एण्ड नेशनल डवलपमेण्ट) के अनुसार महान संवैधानिक महत्त्व का था क्योंकि इसने निश्चित रूप से कम्पनी के राजनीतिक कार्यों को स्वीकार किया और पहली बार संसद को ये अधिकार दिया कि वह जैसी चाहे वैसी सरकार स्थापित करने का आदेश भारत में दे। इसने भारत में सरकार का स्वरूप बदल दिया।

लॉर्ड नॉर्थ के अनुसार "इस एक्ट का प्रत्येक अनुच्छेद इस प्रकार बनाया गया था कि वह कम्पनी के मामलों को ठोस, सुस्पष्ट एवं निर्णायक स्वरूप प्रदान कर सके।"

1781 का संशोधन अधिनियम–

इस अधिनियम के द्वारा सुप्रीम कोर्ट की विसंगतिपूर्ण अधिकारिता को स्पष्टतापूर्वक निर्धारित किया गया। सुप्रीम कोर्ट एवं सर्वोच्च परिषद के बीच विवाद एवं टकराव को कम करने के लिए यह अधिनियम लाया गया।

(1) सुप्रीम कोर्ट की अधिकारिता को सीमित करते हुए यह रोक लगा दी गयी कि वह कम्पनी के कर्मचारियों के प्रशासनिक निर्णयों के विरुद्ध कार्यवाही नहीं कर सकता।

(2) साथ ही राजस्व वसूली से संबंधित व्यक्तियों एवं कर्मचारियों के विरुद्ध सुप्रीम कोर्ट कार्यवाही नहीं कर सकता था। इस प्रकार बंगाल की सर्वोच्च परिषद की सर्वोच्चता को स्थापित किया गया।

(3) कानून बनाने तथा उसका क्रियान्वयन करते समय सुप्रीम कोर्ट को भारतीयों के सामाजिक तथा धार्मिक रीति–रिवाजों का सम्मान करने का भी निर्देश दिया गया।

(4) कलकत्ता की सरकार को बंगाल, बिहार और उड़ीसा के लिए भी विधि बनाने का अधिकार प्रदान किया गया।

(5) इस अधिनियम को एक्ट ऑफ सेटलमेंट अथवा बंदोबस्त अधिनियम के नाम से भी जाना जाता है।

सन 1784 का पिट्स इंडिया एक्ट–

रेग्यूलेटिंग एक्ट की कमियों को दूर करने के लिए ब्रिटिश संसद ने सन 1784 ई. में पिट्स इंडिया एक्ट पारित किया। इस अधिनियम से कम्पनी के निदेशक मण्डल के राजनीतिक कार्यों से संबंधित अधिकार कम कर दिये गये। राजनीतिक कार्यों के लिए 'बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल' की स्थापना की गई जिसका अध्यक्ष ब्रिटिश संसद का सदस्य होता था। इस अधिनियम के पारित होने से निम्न परिवर्तन हुए–

(i) कम्पनी की सरकार पर ब्रिटिश संसद का नियंत्रण बढ़ गया।

(ii) गवर्नर जनरल की परिषद में चार के स्थान पर तीन सदस्य कर दिये गये।

(iii) भारत में कम्पनी के अधिकृत प्रदेशों को पहली बार 'ब्रिटिश अधिकृत भारतीय प्रदेश' का नाम दिया

गया।

(iv) बम्बई तथा मद्रास में गवर्नरों की सहायता के लिये तीन–तीन सदस्यीय काऊंसिल बनायी गयीं।

सर कार्टनी इल्बर्ट के अनुसार "इस अधिनियम द्वारा बोर्ड ऑफ कंट्रोल की स्थापना की गयी, जिसका मुख्य कार्य डायरेक्टर्स को नियंत्रित करना था। इस प्रकार शासन की दोहरी प्रणाली, एक कम्पनी द्वारा और दूसरी संसदीय बोर्ड द्वारा स्थापित की गयी। निरीक्षण एवं प्रति निरीक्षण की यह व्यवस्था सन 1858 तक चलती रही।

सन 1786 का संशोधन अधिनियम–

इस अधिनियम के द्वारा गवर्नर जनरल को विशेष परिस्थितियों में अपनी परिषद के निर्णयों को रद्द करने तथा अपने निर्णय लागू करने का अधिकार दिया गया। गवर्नर जनरल को मुख्य सेनापति की शक्तियां भी मिल गयीं।

सन 1793 का चार्टर एक्ट–

कम्पनी के कार्यों एवं संगठन में सुधार के लिए यह चार्टर पारित किया गया। इस चार्टर की प्रमुख विशेषता यह थी कि इसमें पूर्व के अधिनियमों के सभी महत्त्वपूर्ण प्रावधानों को शामिल किया गया था। इस अधिनियम की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित थीं :–

(1) कम्पनी के व्यापारिक अधिकारों को अगले 20 वर्षों के लिए बढ़ा दिया गया।

(2) विगत शासकों के व्यक्तिगत नियमों के स्थान पर ब्रिटिश भारत में लिखित विधि–विधानों द्वारा प्रशासन की आधारशिला रखी गयी। इन लिखित विधियों एवं नियमों की व्याख्या न्यायालय द्वारा किया जाना निर्धारित किया गया।

(3) गवर्नर जनरल एवं गवर्नरों की परिषदों की सदस्यता की योग्यता के लिए सदस्य को कम–से–कम 12 वर्षों तक भारत में रहने के अनुभव को आवश्यक कर दिया गया।

(4) नियंत्रक मंडल के सदस्यों का वेतन अब भारतीय कोष से दिया जाना तय हुआ।

सन 1813 ई. का चार्टर एक्ट–

लम्बे समय तक चले नेपोलियन युद्व और महाद्वीपीय प्रणाली के क्रियान्वयन के कारण ब्रिटिश व्यापार में उल्लेखनीय कमी दर्ज की गयी। दूसरी ओर ब्रिटिश व्यापारी एवं उद्योगपति पूर्वी देशों के व्यापार को सभी निजी व्यापारियो के लिए खोलने की माँग कर रहे थे। अतः उनकी माँगो को पूरा करने लिए चार्टर अधिनियम पारित किया गया। इसे सन 1813 ई. का ईस्ट इंडिया कंपनी अधिनियम भी कहा गया। इसके मुख्य प्रावधान निम्न प्रकार थे :–

(1) कम्पनी के व्यापारिक एकाधिकार को समाप्त किया गया। भारतीय व्यापार को सभी ब्रिटिश व्यापारियों के लिए खोल दिया गया। केवल चाय तथा चीन के साथ भारत के व्यापार पर कम्पनी का एकाधिकार रहा।

(2) ईसाई मिशनरियों को भारत में जाकर ईसाई धर्म के प्रचार–प्रसार की अनुमति दी गयी।

(3) शिक्षा के लिए 1 लाख रूपये का प्रावधान रखा गया।

सन 1833 ई. का चार्टर एक्ट–

सन 1813 के अधिनियम के बाद भारत में कम्पनी के साम्राज्य में काफी वृद्धि हुई तथा महाराष्ट्र, मध्य

भारत, ग्वालियर, इंदौर आदि पर अंग्रेजों का प्रभुत्व स्थापित हो गया। इसी प्रभुत्व को स्थायित्व प्रदान करने के लिए 1833 का चार्टर अधिनियम पारित किया गया। इसके मुख्य प्रावधान निम्न प्रकार थे :–

(1) कम्पनी की व्यापारिक गतिविधियों को पूर्णतया समाप्त कर दिया गया। इसके साथ ही स्वाभाविक रूप से चाय के व्यापार तथा चीन के साथ व्यापार पर कम्पनी का एकाधिकार समाप्त हुआ।

(2) इस अधिनियम के द्वारा भारत के प्रशासन का केन्द्रीकरण कर दिया गया बंगाल के गवर्नर – जनरल को पूरे भारत का गवर्नर–जनरल बनाया गया। अधीनस्थ प्रेसिडेंसियों के विधायी एवं वित्तीय अधिकार समाप्त कर दिये गये।

(3) कम्पनी के ऋणों की जिम्मेदारी भारत सरकार ने अपने ऊपर ले ली।

(4) कम्पनी के किसी पद पर नियुक्ति के लिये सभी भारतीयों को अन्य ब्रिटिश प्रजा के समान सक्षम माना गया। धर्म, राष्ट्रीयता, प्रजाति इत्यादि के आधार पर भारतीयों के साथ भेदभाव नहीं किया जायेगा।

(5) इस अधिनियम द्वारा बेहतर कानून बनाने के लिए गर्वनर जनरल की परिषद में कानूनी सदस्य के रूप में चौथे सदस्य को सम्मिलित किया गया।

(6) भारतीय कानूनों को संचित, संहिता बद्ध तथा सुधारने की भावना से एक विधि आयोग की नियुक्ति की गई।

(7) दासों की स्थिति सुधारने तथा दासता समाप्त करने के लिए कहा गया।

सन 1853 ई. का चार्टर एक्ट–

सन 1853 ई0 का राजपत्र भारतीय शासन (ब्रिटिश कालीन) के इतिहास में अंतिम चार्टर एक्ट था। यह अधिनियम मुख्यतः भारतीयों की ओर से कम्पनी के शासन की समाप्ति की माँग तथा तत्कालीन गवर्नर जनरल लॉर्ड डलहौजी की रिपोर्ट पर आधारित था। इसके अनुसार कम्पनी को भारतीय प्रदेशों को ब्रिटेन की साम्राज्ञी तथा उसके उत्तराधिकारियों की ओर से ट्रस्टी के रूप में संसद के निर्णयाधीन रखने की अनुमति दी गयी। इसकी प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित थीं :–

(1) ब्रिटिश संसद को किसी भी समय कम्पनी के भारतीय शासन को समाप्त करने का अधिकार दिया गया।

(2) कार्यकारिणी परिषद के लॉ मेम्बर को परिषद के पूर्ण सदस्य का दर्जा प्रदान किया गया।

(3) बंगाल के लिए पृथक गवर्नर की नियुक्ति की व्यवस्था की गयी।

(4) गवर्नर जनरल को अपनी परिषद के उपाध्यक्ष की नियुक्ति का अधिकार दिया गया।

(5) विधायी कार्यों को प्रशासनिक कार्यों से पृथक करने की व्यवस्था की गयी।

(6) निदेशक मंडल में सदस्यों की संख्या 24 से घटाकर 18 कर दी गयी।

(7) कम्पनी के कर्मचारियों की नियुक्ति के लिए प्रतियोगी परीक्षा की व्यवस्था की गयी।

(8) पहली बार व्यवस्थापिकाओं को यह अधिकार दिया गया कि वे अपने अनुरूप नियमों का निर्माण कर सकती हैं।

सन 1858 ई. का भारत सरकार अधिनियम–

सन 1853 ई0 के चार्टर में कम्पनी को शासन के लिए चूँकि किसी निश्चित अवधि के लिए अधिकृत नहीं किया गया था, इसलिए किसी भी समय सत्ता का हस्तांतरण ब्रिटिश ताज को संसद के द्वारा हस्तांतरित किया

जा सकता था। भारतीय जनता ने सन 1857 ई. में अंग्रेजी शासन के खिलाफ विद्रोह कर दिया। इस कारण ब्रिटिश शासन विवश होकर औपनिवेशिक शासन व्यवस्था में बदलाव पर विचार करने लगा। सन 1857 ई.के गदर ने शासन की असंतोषजनक नीतियां उजागर कर दी थीं, जिससे संसद को कम्पनी को पदच्युत करने का बहाना मिल गया। साम्राज्य की सुरक्षा के लिए ब्रिटिश संसद ने कई अधिनियम पारित किये जो भारतीय प्रशासन का आधार बने। 1858 के अधिनियम के प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित थे :–

1. भारत में कम्पनी के शासन को समाप्त कर शासन का उत्तरदायित्व ब्रिटिश साम्राज्ञी को सौंप दिया गया।
2. अब भारत का शासन ब्रिटिश साम्राज्ञी की ओर से राज्य सचिव को चलाना था, जिसकी सहायता के लिए 15 सदस्यीय भारत परिषद का गठन किया गया। भारत के शासन से संबंधित सभी कानूनों एवं कार्यवाहियों पर भारत सचिव की स्वीकृति अनिवार्य की गयी।
3. भारत के गवर्नर जनरल का नाम 'वाइसराय' (क्राउन का प्रतिनिधि) किया गया तथा उसे भारत सचिव की आज्ञा के अनुसार कार्य करने के लिए बाध्य किया गया। इस प्रकार भारत के प्रथम वाइसराय लॉर्ड कैनिंग बने।
4. भारत मंत्री को वाइसराय से गुप्त पत्र व्यवहार तथा ब्रिटिश संसद में प्रतिवर्ष भारतीय बजट पेश करने का अधिकार दिया गया।
5. भारत सचिव का पद सृजित किया गया ।

1 नवम्बर, 1858 को ब्रिटेन की महारानी विक्टोरिया ने भारत के सम्बंध में एक महत्त्वपूर्ण नीतिगत उद्घोषणा की। इस घोषणा के महत्त्वपूर्ण बिंदु निम्न प्रकार थे :–

1. भारतीय प्रजा को साम्राज्य के अन्य भागों में रहने वाली ब्रिटिश प्रजा के समान माना जायेगा।
2. भारतीय नागरिकों के साथ लोक सेवाओं में अपनी शिक्षा, योग्यता तथा विश्वसनीयता के आधार पर स्वतंत्र एवं निष्पक्ष भर्ती में भेदभाव नहीं किया जायेगा।
3. भारत के लोगों के भौतिक एवं नैतिक उन्नति के प्रयास किये जायेंगे।
4. देशी नरेशों के साथ ईस्ट इण्डिया कम्पनी की संधियों का यथावत सम्मान किया जायेगा।

सन 1861 ई. का भारतीय परिषद अधिनियम–

सन 1861 ई. का भारतीय परिषद अधिनियम भारत के संवैधानिक इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण और युगांतकारी घटना है। यह दो कारणों से महत्त्वपूर्ण है। प्रथम, इसने गवर्नर जनरल को अपनी विस्तारित परिषद में भारतीय जनता के प्रतिनिधियों को नामजद करके उन्हें विधायी कार्य से संबद्ध करने का अधिकार दिया। दूसरा यह कि इसने गवर्नर जनरल की परिषद की विधायी शक्तियों का विकेन्द्रीकरण कर दिया अर्थात बम्बई और मद्रास की सरकारों को भी विधायी शक्ति प्रदान की गयी। इस अधिनियम के अन्य महत्त्वपूर्ण प्रावधान निम्न प्रकार थे :–

(1) गवर्नर जनरल की विधान परिषद की संख्या में वृद्धि करते हुए परिषद में न्यूनतम 6 तथा अधिकतम 12 सदस्य किये गये जिनमें आधे सदस्यों का गैर सरकारी होना जरूरी था।

(2) गवर्नर जनरल को विधायी कार्यों हेतु नये प्रांत के निर्माण तथा नव निर्मित प्रांत में गवर्नर या लेफ्टिनेंट गवर्नर को नियुक्त करने का अधिकार दिया गया।

(3) भारतीयों के लिए गवर्नर जनरल व गवर्नरों की परिषदों में गैर सरकारी सदस्यों के रूप में भारतीयों की

भागीदारी का मार्ग प्रशस्त हुआ।

(4) गवर्नर जनरल को अध्यादेश जारी करने का अधिकार दिया गया। सन 1865 ई0 के अधिनियम द्वारा गवर्नर जनरल को उदघोषणा के माध्यम से प्रेसीडेन्सियों तथा प्रांतों की सीमाओं को तय करने तथा उनमें परिवर्तन करने का अधिकार दिया गया। इसी तरह सन 1869 ई0 के अधिनियम द्वारा गवर्नर जनरल को विदेश में रहने वाले भारतीयों के सम्बन्ध में कानून बनाने का अधिकार दिया गया। सन 1873 ई0 के अधिनियम द्वारा ईस्ट इंडिया कम्पनी को किसी भी समय भंग करने का प्रावधान किया गया। इसी के अनुसरण में 1 जनवरी, 1874 को ईस्ट इंडिया कम्पनी को भंग कर दिया गया।

सन 1892 ई. का भारतीय परिषद अधिनियम–

सन 1861 ई0 के अधिनियम के अंतर्गत परिषद में गैर सरकारी सदस्य या तो बड़े जमींदार, अवकाश प्राप्त अधिकारी या भारत के राज परिवारों के सदस्य हुआ करते थे। भारतीय जनता के आम प्रतिनिधित्व की आकांक्षा की पूर्ति इससे नहीं हुई। सन 1885 ई0 में कांग्रेस की स्थापना हो चुकी थी और वह ब्रिटिश राज के विरुद्ध आंदोलन में भारतीय जनता की अगुवाई करने लगी। इस समय राष्ट्रवाद का आंदोलन चरम पर था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा भारतीयों के अधिक प्रतिनिधित्व की माँग की जाती थी। यूरोपीय व्यापारियों की ओर से भी भारत सरकार से इंग्लैंड में स्थित 'इंडिया ऑफिस' के नियंत्रण से अधिक स्वतंत्रता की माँग की जाने लगी। परिणामस्वरूप सर जॉर्ज चिजनी की अध्यक्षता में एक कमेटी गठित की गयी जिसके सुझावों का समावेश 1892 के अधिनियम में किया गया। इस अधिनियम के मुख्य प्रावधान निम्न प्रकार थे :–

(1) इस अधिनियम के द्वारा केन्द्रीय तथा प्रांतीय विधान परिषद में 'अतिरिक्त सदस्यों' की संख्या बढ़ा दी गयी और उनके निर्वाचन का भी विशेष उल्लेख किया गया। यद्यपि इसके द्वारा सीमित चुनाव की ही व्यवस्था हुई, फिर भी भारत के मुख्य सामाजिक वर्गों का प्रतिनिधित्व विधान परिषद में सुनिश्चित किया गया।

(2) निर्वाचन की पद्धति का सिद्धांत सीमित रूप से स्वीकार कर लिया गया।

(3) परिषद के अधिकारों में भी वृद्धि की गयी। वार्षिक आय या बजट का ब्योरा परिषद में प्रस्तुत करना आवश्यक किया गया। विषयों पर चर्चा का अधिकार था लेकिन मत देने का अधिकार नहीं दिया गया ।

(4) सदस्यों को कार्यपालिका के कार्य के बारे में प्रश्न पूछने का अधिकार दिया गया।

यद्यपि इस अधिनियम द्वारा विधायिका के सदस्यों के निर्वाचन की सीमित शुरूआत हुई, फिर भी इस अधिनियम में अनेक खामियाँ थीं जिनके कारण भारतीय राष्ट्रवादियों ने इस अधिनियम की बार–बार आलोचना की। यह माना गया कि स्थानीय निकायों का चुनाव मंडल बनाना एक प्रकार से इनके द्वारा मनोनीत करना ही है। विधान मंडलों की शक्तियाँ भी काफी सीमित थीं। सदस्य अनुपूरक प्रश्न नहीं पूछ सकते थे। किसी प्रश्न का उत्तर देने से इंकार किया जा सकता था। इसके अलावा वर्गों का प्रतिनिधित्व भी पक्षपातपूर्ण था।

सन 1909 ई. का भारतीय परिषद अधिनियम (मॉर्ले मिन्टो सुधार)–

सन 1892 ई. का अधिनियम राष्ट्रवादियों को संतुष्ट नहीं कर सका, साथ ही राष्ट्रीय आंदोलन पर उग्रवादी नेताओं का प्रभाव बढ़ता जा रहा था। सेक्रेटरी ऑफ स्टेट, लॉर्ड मॉर्ले तथा भारत में वाइसराय लॉर्ड मिन्टो, दोनों ही शासन में कुछ नये सुधारों के पक्षधर थे। सर अरुण्डेल कमेटी की रिपोर्ट के आधार पर फरवरी, 1909 ई. में नया अधिनियम पारित किया गया जिसे भारतीय परिषद अधिनियम, 1909 और 'मार्ले–मिन्टो सुधार' के नाम से जाना गया। इस अधिनियम के प्रमुख प्रावधान इस प्रकार थे :–

(1) इस अधिनियम के द्वारा केन्द्रीय एवं प्रांतीय विधान परिषदों में निर्वाचित सदस्यों की संख्या में वृद्धि की गयी। प्रांतीय विधान परिषदों में गैर सरकारी सदस्यों का बहुमत स्थापित किया गया।

(2) केन्द्रीय एवं प्रान्तीय परिषदों की सीटों को 3 श्रेणियों में विभाजित किया गया– सामान्य (क्षेत्रीय आधार पर विभिन्न प्रान्तों को आवंटित), विशिष्ट निर्वाचन मण्डल (मुसलमान व भूमिपति) एवं विशिष्ट हित (चैम्बर ऑफ कॉमर्स, प्लांटर्स एसोसिएशन, विश्वविद्यालय, पोर्ट ट्रस्ट इत्यादि)।

(3) सामान्य सीटों के सदस्य अप्रत्यक्ष रूप से चुने जाते थे। स्थानीय निकायों से निर्वाचन परिषद का गठन होता था। ये प्रांतीय विधान परिषदों के सदस्यों का चुनाव करती थी और प्रांतीय विधान परिषद के सदस्य केन्द्रीय व्यवस्थापिका के सदस्यों का चुनाव करते थे।

(4) पहली बार पृथक निर्वाचन व्यवस्था को प्रारंभ किया गया। साम्प्रदायिक आधार पर निर्वाचन की पद्धति लागू की गयी।

(5) गवर्नर जनरल की कार्यकारिणी में एक भारतीय सदस्य को नियुक्त करने की व्यवस्था की गयी। प्रथम भारतीय सदस्य के रूप में श्री सत्येन्द्र सिन्हा की नियुक्ति हुई।

(6) विधायिका के कार्यक्षेत्र में विस्तार किया गया। सदस्यों को बजट प्रस्ताव करने और जनहित के विषयों पर प्रश्न पूछने एवं पूरक प्रश्न पूछने का अधिकार दिया गया। जिन विषयों को विधायिका के क्षेत्र से बाहर रखा गया था, वे थे सशस्त्र सेना, विदेशी सम्बंध और देशी रियासतें।

(7) इस अधिनियम द्वारा सेंट्रल लेजिस्लेटिव काउंसिल का नाम परिवर्तन कर इम्पीरियल लेजिस्लेटिव काउंसिल किया गया।

इस अधिनियम की सबसे बड़ी त्रुटि यह थी कि पृथक अथवा साम्प्रदायिक आधार पर निर्वाचन की पद्धति लागू की गयी। इस अधिनियम से संसदीय प्रणाली तो दे दी गयी, परंतु उत्तरदायित्व नहीं दिया गया।

सन 1919 ई. का भारत सरकार अधिनियम (मोंटेग्यू–चेम्सफोर्ड सुधार)–

1909 के अधिनियम की आलोचना, प्रथम विश्व युद्ध से उत्पन्न परिस्थितियों, ब्रिटिश शासन की नीतियों के खिलाफ उपजे क्रान्तिकारी आन्दोलनों के विस्तार तथा विभिन्न वर्गों को सन्तुष्ट करने के उद्देश्य से 20 अगस्त, 1917 को तत्कालीन सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर इंडिया, मॉन्टेग्यु ने इंग्लैड के 'हाउस ऑफ कॉमन्स' में एक ऐतिहासिक वक्तव्य दिया, जिसमें उन्होंने ब्रिटेन के इरादे इस प्रकार बयां किये :

"प्रशासन के साथ भारतीयों को सम्बद्ध करना और स्वायत्तशासी संस्थाओं का क्रमिक विकास, जिससे ब्रिटिश भारत के अभिन्न अंग के रूप में उत्तरदायी सरकार की स्थापना हो सके।"

इसी घोषणा को क्रियान्वित करने के लिए 'मोंटफोर्ड रिपोर्ट–1918' प्रकाशित की गयी, जो 1919 के अधिनियम का आधार बनी। इस एक्ट द्वारा तत्कालीन भारतीय शासन व्यवस्था में कई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किये गये :–

(1) केन्द्रीय विधान परिषद का स्थान राज्य परिषद (उच्च सदन) तथा विधान सभा (निम्न सदन) वाले द्वि सदनीय विधान मंडल ने ले लिया। हालांकि विधान मण्डल में सदस्यों को मनोनीत करने की कुछ शक्तियाँ यथावत रखी गयीं, फिर भी प्रत्येक सदन में निर्वाचित सदस्यों का बहुमत सुनिश्चित किया गया।

(2) सदस्यों का चुनाव सीमांकित निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष रूप से किया गया। अधिनियम से मताधिकार का

विस्तार किया गया। निर्वाचक मंडल के लिए योग्यताएँ साम्प्रदायिक समूह, निवास और सम्पत्ति पर आधारित थीं।

(3) आठ प्रमुख प्रांतों में जिन्हें 'गवर्नर का प्रांत' कहा जाता था में "द्वैध शासन" की एक नयी पद्धति शुरू की गयी। प्रांतीय सूची के विषयों को दो भागों में बाँटा गया– सुरक्षित विषय और हस्तांतरित विषय। सुरक्षित सूची के विषय गवर्नर के अधिकार क्षेत्र में थे और वह इन विभागों को अपनी कार्यकारिणी की सहायता से देखता था। हस्तांतरित विषय भारतीय मंत्रियों के अधिकार में थे, जिनकी नियुक्ति भारतीय सदस्यों में से की जाती थी।

(4) अधिनियम के लागू होने के दस वर्ष बाद द्वैध शासन प्रणाली तथा संवैधानिक सुधारों के व्यावहारिक रूप की जाँच के लिए और उत्तरदायी सरकार की प्रगति से सम्बन्धित मामलों पर सिफारिश करने के लिए ब्रिटिश संसद द्वारा एक आयोग के गठन की व्यवस्था की गयी। इसी प्रावधान के अनुसार सन 1927 ई0 में साईमन आयोग का गठन किया गया।

सन 1919 ई0 के अधिनियम में अनेक खामियाँ थीं। इसने उत्तरदायी सरकार की माँग को पूरा नहीं किया। इसके अलावा गवर्नर जनरल की स्वीकृति के बिना प्रांतीय विधान मंडल अनेक विषयों में विधेयक पर बहस नहीं कर सकते थे। सिद्धान्त रूप में केन्द्रीय विधान मंडल सम्पूर्ण क्षेत्र में कानून बनाने के लिए सर्वोच्च तथा सक्षम बना रहा। केन्द्र तथा प्रांतों के बीच शक्तियों के बँटवारे के बावजूद ब्रिटिश भारत का संविधान एकात्मक राज्य का संविधान ही बना रहा। प्रांतों में द्वैध शासन पूरी तरह विफल हो गया। गवर्नर का पूर्ण वर्चस्व कायम रहा। वित्तीय शक्ति के अभाव में मंत्री अपनी नीतियों को प्रभावी रूप से क्रियान्वित नहीं कर सकते थे। इसके अलावा मंत्री विधान मंडल के प्रति सामूहिक रूप से जिम्मेदार भी नहीं थे।

साइमन कमीशन 1927–

1919 के अधिनियम की धारा 84 के अनुसार सर जॉन साइमन की अध्यक्षता में एक आयोग का गठन किया गया। इस आयोग में एक भी भारतीय सदस्य नहीं था। अतः भारतीयों ने इसका विरोध किया। आयोग की रिपोर्ट जून, 1930 में प्रकाशित हुई। साइमन कमीशन द्वारा डोमिनियन दर्जे की माँग को ठुकरा दिये जाने के बाद कांग्रेस ने सन 1929 ई. के लाहौर अधिवेशन में 'पूर्ण स्वराज' का प्रस्ताव पारित किया।

साइमन कमीशन का बहिष्कार करते हुए

सन 1935 ई. का भारत सरकार अधिनियम–

1919 के अधिनियम के तहत प्रस्तावित उत्तरदायी सरकार कभी भी अस्तित्व में नहीं आ पायी। इसके पश्चात सन 1927 ई0 में गठित साइमन कमीशन, नेहरू रिपोर्ट, गोलमेज सम्मेलनों द्वारा अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाना आदि की पृष्ठभूमि ने 1935 के अधिनियम की आधारशिला रखी। 1935 के भारत सरकार अधिनियम में 321 अनुच्छेद तथा 10 अनुसूचियाँ थीं। इस अधिनियम के प्रमुख प्रावधान निम्न प्रकार थे :–

(1) इस अधिनियम द्वारा ब्रिटिश प्रांतों एवं देशी राज्यों के अखिल भारतीय संघ का प्रावधान किया गया, जिसमें ब्रिटिश प्रांतों का शामिल होना अनिवार्य था, किन्तु देशी रियासतों का शामिल होना नरेशों की इच्छा पर निर्भर था।

(2) संघ तथा केन्द्र के बीच शक्तियों का विभाजन किया गया। विभिन्न विषयों की तीन सूचियाँ बनायी गयीं– संघीय सूची, प्रांतीय सूची तथा समवर्ती सूची।

(3) 1919 के अधिनियम द्वारा जो द्वैध शासन प्रांतों में लागू किया गया था, उसे केन्द्र में लागू किया गया। केन्द्रीय सरकार के विषयों को दो भागों में विभाजित किया गया– संरक्षित विषय और हस्तांतरित विषय। संरक्षित विषय गवर्नर जनरल के अधिकार क्षेत्र में रखे गये, जबकि हस्तांतरित विषयों का शासन मंत्रिपरिषद को सौंपा गया।

(4) केन्द्र में द्विसदनात्मक विधायिका की स्थापना की गयी– राज्य परिषद (उच्च सदन) तथा केन्द्रीय विधान सभा (निम्न सदन)।

(5) प्रांतों में द्वैध शासन को समाप्त कर प्रांतीय स्वायत्तता के सिद्धान्त को स्वीकार किया गया।

(6) प्रांतीय विधायिका को प्रांतीय सूची तथा समवर्ती सूची पर कानून बनाने का अधिकार दिया।

(7) प्रांतीय विधान मंडल को अनेक शक्तियाँ दी गयी। मंत्रिपरिषद को विधानमंडल के प्रति जिम्मेदार बनाया गया और वह एक अविश्वास प्रस्ताव पारित कर उसे पदच्युत कर सकती थी। विधान मंडल प्रश्नों तथा अनुपूरक प्रश्नों के माध्यम से प्रशासन पर कुछ नियंत्रण रख सकता था।

(8) इस अधिनियम के अधीन बर्मा को भारत से अलग कर दिया गया और उड़ीसा तथा सिन्ध नाम से दो नये प्रांत बनाये गये।

(9) इस अधिनियम में एक संघीय बैंक और एक संघीय न्यायालय की स्थापना का भी प्रावधान किया गया।

(10) केन्द्रीय सरकार संबंधी प्रस्ताव लागू नहीं हुए। देशीय राज्यों की अनिच्छा व उदासीनता के कारण अखिल भारतीय परिसंघ अस्तित्व में नहीं आया।

प्रांतों में सन 1937 ई0 में चुनाव संपन्न होने के पश्चात द्वैध शासन समाप्त हुआ एवं पूर्ण स्वायत्तता स्थापित हुई किन्तु गवर्नर की निरंकुश शक्तियों ने इस स्वायत्तता को बेमानी कर दिया।

भारतीय स्वतंत्रता अधिनिमय 1947–

माउन्टबेटन योजना के आधार पर ब्रिटिश संसद द्वारा पारित भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम 1947 के प्रमुख प्रावधान इस प्रकार थे :–

(1) भारत तथा पाकिस्तान नामक दो डोमिनियनों की स्थापना के लिए 15 अगस्त, 1947 की तारीख निश्चित की गयी।

(2) इसमें भारत का क्षेत्रीय विभाजन भारत तथा पाकिस्तान के रूप में करने तथा बंगाल एवं पंजाब में दो–दो प्रांत बनाने का प्रस्ताव किया गया। पाकिस्तान को मिलने वाले क्षेत्रों को छोड़कर ब्रिटिश भारत में सम्मिलित सभी प्रांत भारत में सम्मिलित माने गये।

(3) पूर्वी बंगाल, पश्चिमी बंगाल और असम के सिलहट जिले को पाकिस्तान में सम्मिलित किया जाना था।

(4) भारत में महामहिम की सरकार का उत्तरदायित्व तथा भारतीय रियासतों पर महामहिम का अधिराजत्व 15 अगस्त, 1947 को समाप्त हो जायेगा।

(5) भारतीय रियासतें इन दोनों (भारत, पाकिस्तान) में से किसी में शामिल हो सकती थीं।

(6) प्रत्येक डोमिनियन के लिए पृथक गवर्नर जरनल होगा जिसे महामहिम द्वारा नियुक्त किया जायेगा। गवर्नर जनरल डोमिनियन की सरकार के प्रयोजनों के लिए महामहिम का प्रतिनिधित्व करेगा।

(7) प्रत्येक डोमिनियन के लिए पृथक विधानमंडल होगा, जिसे विधियाँ बनाने का पूरा प्राधिकार होगा तथा ब्रिटिश संसद उसमें कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकेगी।

(8) डोमिनियन की सरकार के लिए अस्थायी उपबंध के द्वारा दोनों संविधान सभाओं को संसद का दर्जा तथा डोमिनियन विधानमंडल की पूर्ण शक्तियां प्रदान की गयी।

(9) इसमें गवर्नर जनरल को एक्ट के प्रभावी प्रवर्तन के लिए ऐसी व्यवस्था करने हेतु, अस्थायी आदेश जारी करने का प्राधिकार दिया गया, जो उसे आवश्यक तथा समीचीन प्रतीत हो।

(10) इसमें सेक्रेटरी ऑफ स्टेट (भारत सचिव) की सेवाओं तथा भारतीय सशस्त्र बल, ब्रिटिश थल सेना, नौसेना और वायु सेना पर महामहिम की सरकार का अधिकार क्षेत्र अथवा प्राधिकार जारी रहने की शर्तें निर्दिष्ट की गयी थी।

ब्रिटिश काल में उपर्युक्त उल्लिखित विभिन्न एक्ट एवं उनकी धाराओं के लागू होने के बाद भी स्वतंत्रता–प्राप्ति के पश्चात् हमारे राष्ट्र निर्माताओं के सामने सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य था एक ऐसे संविधान की रचना करना जिसके माध्यम से उस आदर्श की प्राप्ति की सके जिसके लिए स्वतंत्रता सेनानियों ने लम्बे समय संघर्ष किया था।

संविधान सभा का गठन–

स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व ही सन 1946 ई. में कैबिनेट मिशन भारत आया। इस योजना के अनुसार जुलाई, 1946 में संविधान सभा के चुनाव हुए। संविधान सभा के लिए कुल 389 सदस्यों (ब्रिटिश प्रांत 296 व देशी रियासतें 93) का प्रावधान रखा गया।

भारत की संविधान सभा का गठन तीन चरणों में पूरा हुआ। कैबिनेट मिशन योजना के अनुसार संविधान सभा के 296 सदस्यों का निर्वाचन जुलाई–अगस्त, 1946 में हुआ। द्वितीय चरण की शुरूआत 3 जून 1947 की विभाजन योजना से होती है। संविधान सभा का पुनर्गठन किया गया । देश का बंटवारा हो जाने के बाद संविधान निर्मात्री सभा की कुल सदस्य संख्या 324 रह गयी जिसमें 235 स्थान प्रान्तों के लिए और 89 देशी राज्यों के लिए निर्धारित थे। तृतीय चरण देशी रियासतों से सम्बन्धित था और उनके प्रतिनिधि संविधान सभा में सम्मिलित हुए। हैदराबाद ही एक ऐसी रियासत थी जिसके प्रतिनिधि सम्मिलित नहीं हुए। संविधान सभा के गठन के बाद 14 अगस्त, 1947 को जवाहरलाल नेहरू ने कहा कि ''स्वाधीनता और सत्ता अपने साथ उत्तरदायित्व लाती हैं। वह उत्तरदायित्व अब इस भारत के लोगों की प्रतिनिधि, प्रभुसत्ता–सम्पन्न संविधान सभा के कन्धों पर है।''

संविधान सभा के प्रमुख सदस्य : प्रमुख संविधान निर्माता–

यह उल्लेख करना समीचीन होगा कि स्वतंत्र भारत का संविधान भारतीय नेताओं द्वारा दशकों के चिंतन मनन का परिणाम था। संविधान निर्माण पर वैचारिक मंथन लम्बे समय से एक सतत प्रक्रिया के रूप में चलता रहा, यथा– स्वराज संविधान 1895, कॉमनवेल्थ ऑफ इण्डिया बिल 1925, नेहरू रिपोर्ट 1928, कराची प्रस्ताव 1931, सप्रू कमेटी रिपोर्ट 1944। ये सभी दस्तावेज प्रमाणित करते हैं कि स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ–साथ भारतीय नेतृत्व संविधान निर्माण के प्रति भी सजग रहा।

संविधान सभा में पण्डित जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभ भाई पटेल, डॉ. भीमराव अम्बेडकर, के. एम. मुन्शी, गोपालस्वामी आयंगर, अल्लादि कृष्णास्वामी अय्यर, पट्टाभि सीतारमैया, दुर्गाबाई देशमुख, हंसा मेहता, राजकुमारी अमृत कौर, ठाकुरदास भार्गव, मौलाना अबुल कलाम आजाद का योगदान महत्त्वपूर्ण रहा। नेहरू आदर्शवादी थे तो प्रसाद और पटेल अनुभववादी और व्यावहारिक। डॉ. अम्बेडकर कानून के प्रकाण्ड पण्डित थे तो गोपाल स्वामी आयंगर भी बहुत योग्य, तीक्ष्ण बुद्धि के धनी और अनुभवी थे। पटेल के प्रमुख परामर्शदाता के एम. मुन्शी और वी.पी. मेनन थे तो नेहरू के परामर्शदाता कृष्णास्वामी अय्यर और बी.एन. राव थे। संविधान सभा में भारत के सभी वर्गों एवं प्रदेशों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया।

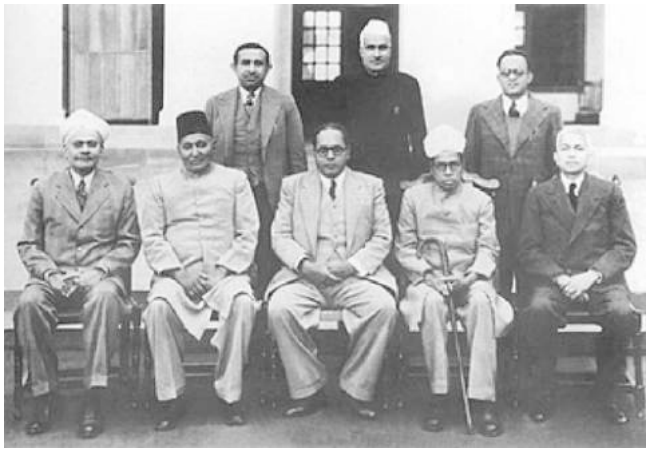

डॉ. अम्बेडकर संविधान प्रारुप समिति के सदस्यों के साथ

संविधान सभा का प्रथम अधिवेशन 9 दिसम्बर, 1946 को संसद भवन के केन्द्रीय कक्ष में प्रारम्भ हुआ। डॉ. सच्चिदानंद सिन्हा को सर्वसम्मति से अस्थाई अध्यक्ष चुना गया। इसके बाद सदस्यों ने अपने प्रत्यय पत्र पेश किए तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर किए। 11 दिसम्बर, 1946 को कांग्रेस के अनुभवी नेता डॉ. राजेन्द्र प्रसाद संविधान सभा के स्थायी अध्यक्ष निर्वाचित हुए। संविधान निर्माण की दिशा में सबसे पहला कदम था जवाहरलाल नेहरू द्वारा प्रस्तुत 'उद्देश्य प्रस्ताव'। यह प्रस्ताव 13 दिसम्बर, 1946 को प्रस्तुत किया गया। प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए नेहरू ने कहा, ''मैं आपके सामने जो प्रस्ताव प्रस्तुत कर रहा हूँ उसमें हमारे उद्देश्यों की व्याख्या की गई है, योजना की रुपरेखा दी गई है और बताया गया है कि हम किस रास्ते पर चलने वाले हैं।'' उद्देश्य प्रस्ताव में भारत को एक स्वतंत्र प्रभुसत्ता–सम्पन्न गणराज्य घोषित करने की आकांक्षा व्यक्त की गई। यह भी कहा गया कि प्रभुसत्ता का वास जनता में होगा तथा भारत के सभी लोगों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय तथा विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म, उपासना और व्यवसाय की गारंटी दी जायेगी। 13 दिसम्बर से 19 दिसम्बर, 1946 तक संविधान सभा ने उद्देश्य प्रस्ताव पर विचार–विमर्श किया। 22 जवनरी, 1947 को संविधान सभा में सदस्यों ने खड़े होकर सर्वसम्मति से इस प्रस्ताव को पास किया।

उद्देश्य प्रस्ताव की स्वीकृति के बाद ही संविधान सभा ने संविधान निर्माण की समस्या के विभिन्न पहलुओं के सम्बन्ध में अनेक समितियां गठित कीं। इनमें प्रमुख समितियाँ थीं– (1) संघ संविधान समिति (2) प्रान्तीय संविधान समिति (3) संघ शक्ति समिति (4) मूल अधिकारों, अल्पसंख्यकों आदि से सम्बन्धित परामर्श समिति तथा (5) प्रारूप समिति आदि। देशी रियासतों से बातचीत करने के लिये संविधान सभा ने एक ''वार्ता समिति'' पूर्व में ही गठित कर ली थी।

संविधान सभा की परामर्श शाखा ने 17 मार्च, 1947 को संविधान की मुख्य विशेषताओं के संबंध में एक प्रश्न सूची विभिन्न प्रान्तीय विधानमण्डलों तथा केन्द्रीय विधानमण्डल के सदस्यों के पास भी भेजी ताकि वे प्रस्तावित संविधान के बारे में अपने विचार व्यक्त कर सकें। इसी समय ब्रिटिश सरकार ने 3 जून, 1947 की योजना प्रकाशित की जिसके अनुसार देश का विभाजन होना था।

अक्टूबर, 1947 में संविधान सभा के सचिवालय की परामर्श शाखा ने संविधान का पहला प्रारूप तैयार किया। इस प्रारूप के तैयार होने के पहले संविधान सभा के सचिवालय ने 3 जिल्दों में विश्व के विभिन्न संविधानों के पूर्व दृष्टान्त एकत्र कर उन्हें संविधान सभा के सदस्यों में वितरित कर दिया। संवैधानिक परामर्शदाता बी. एन. राव ने विश्व के विभिन्न संविधान विशेषज्ञों से विचार–विमर्श कर एक प्रतिवेदन भी प्रस्तुत किया।

डॉ. अम्बेडकर, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद को संविधान का प्रारुप सौंपते हुए

29 अगस्त, 1947 को संविधान सभा ने 'प्रारूप समिति' की नियुक्ति की। डॉ. अम्बेडकर इस समिति के अध्यक्ष चुने गये। अन्य सदस्य थे कन्हैयालाल माणिक्य लाल मुंशी, मोहम्मद सादुल्ला, बी.एल. मित्तर, कृष्णास्वामी अय्यर, एन. गोपालास्वामी आंयगर तथा डी.पी. खेतान। बाद में मित्तर और खेतान के स्थान पर एन. माधवराय तथा टी.टी. कृष्णामाचारी को नियुक्त किया गया। 'प्रारूप समिति' का यह काम था कि वह संविधान सभा की परामर्श शाखा द्वारा तैयार किये गये संविधान के प्रारूप का परीक्षण करके विचार के लिए संविधान सभा के सम्मुख प्रस्तुत करें। 'प्रारूप समिति' ने भारत का जो प्रारूप संविधान तैयार किया वह फरवरी, 1948 को संविधान सभा के अध्यक्ष को सुपुर्द किया गया। प्रारूप संविधान के प्रकाशित होने के बाद संशोधन व सुझाव आमंत्रित किये गये। एक विशिष्ट समिति ने इन सुझावों पर विचार किया तथा प्रारूप संविधान का एक पुनर्मुद्रित संस्करण प्रकाशित किया। 15 नवम्बर, 1948 को प्रारूप संविधान पर धारावार विचार प्रारम्भ हुआ। 8 जनवरी, 1949 तक संविधान सभा 67 अनुच्छेदों पर विचार कर चुकी थी। इसे प्रथम वाचन कहा जाता है, क्योंकि इस कालावधि में संविधान पर सामान्य वाद–विवाद हुआ। 16 नवम्बर, 1949 को संविधान का 'द्वितीय वाचन' समाप्त हो गया। संविधान का तीसरा वाचन 26 नवम्बर, 1949 तक चला जब संविधान सभा द्वारा निर्मित संविधान को अंतिम रुप से पास किया गया। संविधान सभा के अंतिम दिन 24 जनवरी, 1950 को संविधान की 3 प्रतियाँ सभा पटल पर रखी गईं। एक हस्तलिखित प्रति अंग्रेजी में थी जिस पर कलाकारों द्वारा कलाकृतियाँ अंकित की गई थी। दूसरी अंग्रेजी में छपी हुई प्रति थी और तीसरी हिन्दी की हस्तलिखित प्रति थी। सभा के अध्यक्ष ने सभी सदस्यों से प्रार्थना की कि वे एक–एक करके तीनों प्रतियों पर हस्ताक्षर करें। सदस्यों ने संविधान की प्रतियों पर हस्ताक्षर किये और उसके बाद "जन–गण–मन" तथा "वन्देमातरम्" के गायन के साथ 'सभा' का संविधान सभा के रुप में समापन हो गया। 26 जनवरी, 1950 को उसका भारतीय गणराज्य की (अंतरिम) संसद के रुप में आविर्भाव हुआ।

संविधान निर्माण की प्रकिया–

संविधान निर्माण के सम्बन्ध में संविधान सभा ने सबसे पहले उद्देश्य प्रस्ताव के रुप में अपने 'विचारार्थ विषय' निर्धारित किये। यह उद्देश्य प्रस्ताव ही आगे चलकर संविधान की प्रस्तावना का आधार बना। इसके बाद संविधान सभा ने संवैधानिक समस्या के विविध पहलुओ के संबंध में विभिन्न समितियां नियुक्त की। इनमें से अनेक समितियों के अध्यक्ष या तो पण्डित नेहरू थे या सरदार पटेल। संविधान सभा के अध्यक्ष के अनुसार

इन दो महारथियों ने ही संविधान के मूल सिद्धान्त तय किये थे। सभी समितियों ने बड़ी निष्ठा से कार्य किया और महत्त्वपूर्ण प्रतिवेदन प्रस्तुत किए। संविधान सभा में इन प्रतिवेदनों पर विस्तार से विचार किया गया और इन प्रतिवेदनों की सिफारिशें प्रारूप संविधान के लिए आधार बनीं। प्रारूप संविधान की सतर्क छानबीन प्रारूप समिति के सदस्यों ने ही नहीं की बल्कि संविधान सभा के अन्य सदस्यों ने भी प्रारूप संविधान के एक–एक अनुच्छेद का गहराई से विवेचन किया। कहीं कहीं तो प्रत्येक वाक्य ही नहीं अपितु प्रत्येक शब्द पर बहस हुई। प्रारूप संविधान की इस विशद परीक्षा का परिणाम यह हुआ कि उसका आकार बहुत बढ़ गया। संविधान सभा सचिवालय की परामर्श शाखा ने प्रारूप समिति के विचार के लिए संविधान का जो पहला प्रारूप तैयार किया था, उसमें 243 अनुच्छेद और 13 अनुसूचियां थी। संविधान सभा की प्रारूप समिति ने जो पहला प्रारूप संविधान तैयार किया उसमें 315 अनुच्छेद और 8 अनुसूचियां थी। जब प्रारूप संविधान का दूसरा वाचन समाप्त हुआ तब अनुच्छेदों की सख्या 386 हो गई। दूसरे वाचन के बाद जब संविधान अन्तिम रुप में स्वीकार हुआ तब उसमें 395 अनुच्छेद और 8 अनुसूचियां थी। प्रारूप संविधान में संशोधन के 7635 प्रस्ताव सदन पटल पर रखे गये थे। इनमें से सदन में कुल 2473 संशोधन प्रस्तुत किये गये। भारत की जनता ने संविधाननिर्मात्री सभा की कार्यवाही में सक्रिय रुचि ली थी और दर्शक दीर्घा में 53000 दर्शकों को प्रवेश मिला।

सर्वाधिक महत्त्वपपूर्ण तथ्य यह है कि तत्कालीन भारतीय राजनीति के सर्वाधिक प्रमुख दल कांग्रेस ने संविधान सभा को अधिकाधिक प्रतिनिधि स्वरुप प्रदान करने की प्रत्येक सम्भव चेष्टा की। कांग्रेस के तो प्रायः सभी चोटी के नेता पं. नेहरू, सरदार पटेल, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, मौलाना आजाद, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, पं. गोविन्द वल्लभ पन्त, बाल गोविन्द खेर, बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन, के.एम. मुन्शी और आचार्य जे.बी. कृपलानी इसके सदस्य थे। कांग्रेस के ही प्रयत्नों से वैधानिक और प्रशासनिक योग्यता की दृष्टि से ख्याति प्राप्त अनेक ऐसे व्यक्तियों का संविधान सभा के लिए निर्वाचन हुआ था, जो कांग्रेस से सम्बन्धित ही नहीं थे। इनमें से कुछ थे–प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ. अम्बेडकर, ए. के. अय्यर, एन.जी. आंयगर, संथानम, एम. आर. जयकर, सच्चिदानन्द सिन्हा, श्यामाप्रसाद मुखर्जी, वी. शिवाराव, डॉ. राधाकृष्णन, के.टी. शाह, एम.सी. मुखर्जी, हृदयनाथ कुंजरु आदि। प्रारूप समिति के सात सदस्यो में से केवल दो पहले के. एम. मुन्शी और बाद में टी.टी. कृष्णास्वामी कांग्रेस के सदस्य थे। एक मोहम्मद सादुल्ला मुस्लिम लीग के सदस्य थे। अम्बेडकर, खेतान, माधवराव और अय्यर निर्दलीय सदस्य थे।

नेहरु संविधान सभा के सदस्यों के साथ

इन्हीं व्यक्तियों ने सभा को तकनीकी व विधिक विशेषज्ञता प्रदान की। संविधान के मूल स्वरुप का निर्माण करने, दार्शनिक आधार देने तथा उसे उद्देश्यपूर्ण बनाने में इन व्यक्तियों तथा इनकी सामाजिक तथा व्यावसायिक पृष्ठभूमि की निर्णायक भूमिका रहीं। तेज बहादुर सप्रू और जयप्रकाश नारायण को भी संविधान सभा की सदस्यता के लिये आमंत्रित किया गया था, किन्तु सप्रू स्वास्थ्य सम्बन्धी कारणों के आधार पर इसे स्वीकार न कर सके और जयप्रकाश नारायण ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। इस सम्बन्ध में संविधान सभा की सद्इच्छा का प्रमाण यह है कि संविधान सभा के जो सदस्य लीग के टिकट पर निर्वाचित हुए थे, उनमें से जिन्होंने भारत के विभाजन के बाद भारत में ही रहना पसन्द किया उन्हें भी संविधान सभा की सदस्यता प्रदान की गई। लीग के एक प्रतिनिधि मोहम्मद सादुल्ला प्रारूप समिति के भी सदस्य थे। ये तथ्य

रेखांकित करने की आवश्यकता है कि शीर्षस्थ नेताओं के साथ–साथ संविधान सभा के प्रायः सभी सदस्यों ने महत्त्वपूर्ण व सक्रिय भूमिका निभाई। सभा की बहसों के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि इसके सदस्य विलक्षण, प्रबुद्ध, प्रतिबद्ध व परिश्रमी थे। विभिन्न विषयों पर हुई निर्भीक बहसों से ये तथ्य भी भलीभांति स्थापित होता है कि सभा में अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता थी।

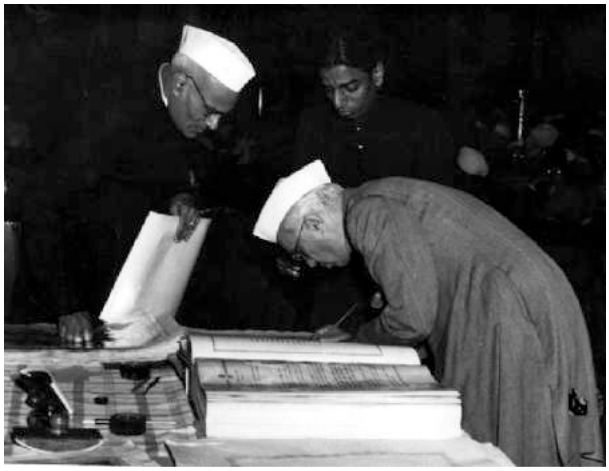

संविधान पर हस्ताक्षर करते हुए

सम्पूर्ण संविधान निर्माण में 2 वर्ष 11 मास और 17 दिन लगे। इस कार्य पर लगभग 64 लाख (63,96,729 रु.) रुपये खर्च हए। संविधान के प्रारूप पर भी 114 दिन तक चर्चा होती रही। अपने अंतिम रुप में संविधान में 395 अनुच्छेद और 8 अनुसूचियाँ थी। संविधान के कुछ अनुच्छेद 26 नवम्बर, 1949 के दिन से लागू कर दिये गए तथा शेष अनुच्छेद 26 जनवरी के दिन के ऐतिहासिक महत्त्व के कारण 26 जनवरी, 1950 ई. से लागू किये गये।

इस पर डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि ''अमरीका, कनाडा, दक्षिण अफ्रीका और आस्ट्रेलिया की संविधान सभाओं को अपने संविधानों की रचना में जितना समय लगा था, उसे देखते हुए भारतीय संविधान सभा ने देश के लिए बहुत शीघ्र ही संविधान बना लिया है और उसे बधाई दी जा सकती है।''

अभ्यास प्रश्न

1. रेग्यूलेटिंग एक्ट लागू होने के समय बंगाल का गवर्नर जनरल कौन था ?

   (अ) वॉरेन हिस्टिंग्ज (ब) वेलेजली

   (स) कर्जन (द) कैनिंग

2. संविधान सभा का प्रथम अधिवेशन कब हुआ ?

   (अ) 22 अक्टू. 1764 (ब) 19 जन. 1919

   (स) 05 मई 1989 (द) 09 दिस. 1946

3. सन 1919 के भारत सरकार अधिनियम से स्थापित द्वैध शासन केन्द्र की जगह प्रातों में किस अधिनियम के तहत लागू किया गया ?

   (अ) 1921 (ब) 1935

   (स) 1947 (द) 1950

4. सन 1935 के भारत सरकार अधिनियम के अनुसार प्रातों में मंत्रिमंडल कब स्थापित हुआ ?

   (अ) जुलाई, 1937 (ब) अगस्त, 1937

   (स) सितम्बर, 1937 (द) अक्तूबर, 1937

5. भारत के संविधान निर्माण की प्रक्रिया को समझाइये।